[2018] 3 उम. नि. प. 414

सुच्चा सिंह सोढी (मृत) विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत

बनाम

बलदेव राज वालिया और एक अन्य

13 अप्रैल, 2018

न्यायमूर्ति आर. के. अग्रवाल और न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 2, नियम 2(2) – द्वितीय वाद पर वर्जन – जब स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया गया प्रथम वाद और उस वाद को वापस लेने के पश्चात् करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए नए सिरे से फाइल किया गया पश्चात्वर्ती वाद भिन्न-भिन्न वाद-हेतुक पर आधारित हों और उनमें दावाकृत अनुतोष भी भिन्न-भिन्न हों तो आदेश 2, नियम 2 के अधीन वर्जन लागू नहीं होगा ।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 – आदेश 23, नियम 1(3) और आदेश 2, नियम 2 – वाद का वापस लिया जाना और नए सिरे से पश्चात्वर्ती वाद फाइल किया जाना – जब स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया गया प्रथम वाद, नए सिरे से समुचित कार्यवाहियां फाइल करने का कथन करते हुए वापस लिया जाता है तो वाद को वापस लेने के लिए दी गई अनुज्ञा से न्यायालय द्वारा नए सिरे से वाद फाइल करने की अनुज्ञा प्रदान करना भी प्रतिबिंबित होता है और आदेश 23, नियम 1(3) के अधीन अपेक्षाएं पूरी करके फाइल किए गए नए वाद के बारे में यह नहीं कहा जा सकता है कि वह आदेश 2, नियम 2 के अधीन वर्जित है ।

प्रस्तुत मामले में, मूल वादी ने, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है और अब उसका प्रतिनिधित्व उसके विधिक प्रतिनिधियों (अपीलार्थी सं. 1 से 4) द्वारा किया जा रहा है, प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश स्थायी व्यादेश की मंजूरी के लिए वाद फाइल किया था । वादपत्र, अन्य बातों के साथ-साथ इन अभिकथनों पर आधारित था कि प्रत्यर्थी सं. 1 वादगत परिसर का स्वामी था और उसने वादी को उसका विक्रय करने का करार किया और वादी ने प्रत्यर्थी सं. 1 को कुल रकम में से अग्रिम के रूप में कुछ राशि का संदाय कर दिया । वादी को उक्त परिसर का कब्ज़ा दे दिया गया था । इसके पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 1 ने वादी को वादगत परिसर से बेदखल करने की धमकी दी और अपने गुर्गों की सहायता से उसे बेदखल

करने का असफल प्रयास किया । इस वाद-हेतुक के आधार पर वादी ने वादगत परिसर के संबंध में प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध वादगत परिसर पर उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने से उसे अवरुद्ध करने के लिए स्थायी व्यादेश हेतु एक सिविल वाद फाइल किया । प्रत्यर्थी सं. 1 ने लिखित कथन फाइल करके यह अभिकथन किया कि उसने वादगत परिसर का कब्ज़ा, प्रस्तुत प्रत्यर्थी सं. 2 को पहले ही अंतरित कर दिया है और इसलिए वादी के पास उपलब्ध उपचार, यदि कोई है, यह होगा कि वह प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए सिविल वाद फाइल करे न कि स्थायी व्यादेश के लिए वाद चलाए । वादी ने न्यायालय में यह कथन किया कि वह प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध समुचित अनुतोष का दावा करने के लिए सक्षम न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियां फाइल करने की दृष्टि से सिविल वाद वापस लेना चाहता है । विचारण न्यायालय ने वादी को सिविल वाद वापस लेने के लिए अनुज्ञात किया । इसके पश्चात् वादी ने प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए अपर जिला न्यायाधीश के न्यायालय में सिविल वाद फाइल किया । प्रत्यर्थी सं. 2, अर्थात्, अभिकथित पश्चात्वर्ती क्रेता ने वाद में पक्षकार (प्रतिवादी) बनने के लिए संहिता के आदेश 1, नियम 10 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । वह आवेदन मंजूर कर लिया गया था और प्रत्यर्थी सं. 2 को प्रतिवादी सं. 2 के रूप में शामिल किया गया था । दोनों प्रत्यर्थियों (प्रतिवादी सं. 1 और 2) ने अपने-अपने लिखित कथन फाइल किए और तथ्य तथा विधि संबंधी विभिन्न आधारों पर वादी के दावे से इनकार किया । प्रत्यर्थी सं. 2 ने भी वादपत्र खारिज किए जाने के लिए संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । यह अभिकथन किया गया कि प्रश्नगत वाद (करार का विनिर्दिष्ट पालन) संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंधों द्वारा प्रभावित होता है क्योंकि विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा, जिसका दावा प्रस्तुत वाद में किया गया है, वादी द्वारा पूर्व में संस्थित उस वाद में, जो कि उसने स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया था, किया जा सकता था और किया जाना चाहिए था । यह दलील दी गई थी कि पूर्व में संस्थित वाद में करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा न करने से, जो कि यद्यपि वादी के पास पूर्ववर्ती वाद में जिस वाद-हेतुक का अभिवाक् किया गया है उसके आधार पर दावा किए जाने के लिए उपलब्ध था, संहिता के आदेश 2, नियम 2 में अंतर्विष्ट वर्जन बाद में संस्थित किए गए ऐसे सिविल वाद को लागू होगा जिसमें करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा किया जाता है और इसलिए ऐसे वाद का अब गुणागुण के आधार पर

विचारण नहीं किया जा सकता है । इस वाद के लंबित रहने के दौरान, वादी की मृत्यु हो गई और मुकदमेबाजी को चालू रखने के लिए उसके विधिक प्रतिनिधियों (जो कि इस मामले में अपीलार्थी हैं) को वादियों के रूप में अभिलेख पर लाया गया । तथापि, विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 2 के आवेदन को मंजूर कर लिया और परिणामस्वरूप यह अभिनिर्धारित करते हुए अपीलार्थियों के वाद को खारिज कर दिया कि वह संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंधों द्वारा वर्जित है । वादियों ने व्यथित महसूस करते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा, विचारण न्यायालय के तर्काधार और निष्कर्ष से सहमत होते हुए अपील खारिज कर दी । वादियों ने उक्त निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में विशेष इजाजत लेकर प्रस्तुत अपील फाइल की है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रतिवादी द्वारा वादी के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2(2) का अवलंब लेने की अनिवार्यता यह है कि वह अनुतोष, जिसका दावा वादी ने द्वितीय वाद में किया है, वादी के पास प्रतिवादी के विरुद्ध पूर्ववर्ती वाद में किए गए वाद-हेतुक के अभिवाक् के आधार पर पूर्ववर्ती वाद में दावा किए जाने के लिए भी उपलब्ध था किन्तु वादी द्वारा उसका दावा नहीं किया गया था । (पैरा 27)

इस प्रश्न के संबंध में कि मूल वादी, पूर्व में संस्थित वाद में स्थायी व्यादेश के अपने दावे के अतिरिक्त प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा कर सकता था अथवा नहीं न्यायालय का उत्तर वादियों (अपीलार्थियों) के पक्ष में और प्रतिवादियों (प्रत्यर्थियों) के विरुद्ध है । दूसरे शब्दों में, वादी पूर्ववर्ती वाद में स्थायी व्यादेश के अनुतोष के साथ-साथ, प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा इन कारणों से नहीं कर सकता था । प्रथमतः, स्थायी व्यादेश के अनुतोष का दावा करने संबंधी वाद-हेतुक और करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा करने संबंधी वाद-हेतुक अलग-अलग हैं और एक वाद-हेतुक के अंतर्गत दूसरा वाद-हेतुक नहीं आ सकता है । दूसरे शब्दों में, कोई वादी ऐसे वाद-हेतुक के आधार पर, जिसमें उसने स्थायी व्यादेश के अनुतोष का दावा किया है, प्रतिवादी के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा नहीं कर सकता है । द्वितीयतः, वादगत परिसर पर वादी के कब्ज़े में हस्तक्षेप करने पर प्रतिवादियों के विरुद्ध अस्थायी/स्थायी व्यादेश का दावा करने संबंधी वाद-हेतुक तब प्रोद्भूत

हुआ जब प्रतिवादी सं. 1 ने वादी को वादगत परिसर से बेदखल करने की धमकी दी या अन्यथा वादगत परिसर के संबंध में वादी को क्षति कारित की । यह संहिता के आदेश 39, नियम 1(ग) द्वारा शासित होता है, जो कि व्यादेश अनुदत्त किए जाने के संबंध में है । ऐसा वाद फाइल करने की परिसीमा अवधि प्रतिवादी द्वारा वादी को बाधा कारित करने की तारीख से तीन वर्ष है । दूसरी ओर, करार के विनिर्दिष्ट पालन का दावा करने के लिए वाद फाइल करने संबंधी वाद-हेतुक उस तारीख से उद्भूत होता है जो कि करार के पालन के लिए नियत की गई है या जब ऐसी कोई तारीख नियत नहीं की जाती है तब वह तारीख जब वादी को इस बात की अवेक्षा होती है कि प्रतिवादी द्वारा पालन से इनकार किया गया है । ऐसा वाद फाइल करने की परिसीमा अवधि ऐसी तारीख से तीन वर्ष है । तृतीयतः, जब दोनों अनुतोष/दावे, अर्थात् (1) स्थायी व्यादेश और (2) करार का विनिर्दिष्ट पालन, समान नहीं हैं, जब वाद चलाने के लिए वाद-हेतुक भिन्न-भिन्न हैं, जब दोनों अनुतोषों/दावों के लिए अलग-अलग वाद-हेतुक गठित करने के लिए आवश्यक तथ्य संबंधी घटक भिन्न-भिन्न हैं और अंततः जब दोनों अनुतोष/दावे परिसीमा अधिनियम के पृथक्-पृथक् अनुच्छेदों द्वारा शासित होते हैं, तब दोनों अनुतोषों का एक-साथ एक ही वाद-हेतुक में दावा करना संभव नहीं है । (पैरा 30, 31, 32, 33, 34 और 35)

मूल वादी ने पूर्ववर्ती वाद में स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि वह वाद को इसलिए वापस लेना चाहता है क्योंकि वह वाद की विषयवस्तु के संबंध में सक्षम न्यायालय के समक्ष समुचित कार्यवाहियां फाइल करना चाहता है । विचारण न्यायालय ने उसका कथन अभिलिखित किया और वाद को वापस लेने की अनुज्ञा प्रदान की । मूल वादी के कथन को न्यायालय द्वारा वाद को वापस लेने के लिए प्रदान की गई अनुज्ञा के साथ पढ़ने से संहिता के आदेश 23, नियम 1(3) की अपेक्षा पूरी हो जाती है । इससे वादी निश्चित रूप से नए सिरे से वाद, अर्थात्, प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन का दावा करने के लिए सिविल वाद, फाइल करने के लिए समर्थ हो जाता है । न्यायालय मूल वादी द्वारा वाद को वापस लेने और उसे नए सिरे से फाइल करने के संबंध में किए गए कथन को विचार में लेने का हकदार था और उसके कथन को सिविल वाद वापस लेने और नए सिरे से वाद फाइल करने की अनुज्ञा प्रदान करने वाले आदेश का भाग बनाया जा सकता था । अपीलार्थियों द्वारा प्रत्यर्थियों के विरुद्ध फाइल किया गया सिविल वाद चलाने योग्य अभिनिर्धारित किया जाता है ।

इसे तद्नुसार गुणागुण के आधार पर विधि के अनुसार विचारण किए जाने के लिए उसकी मूल फाइल पर प्रत्यावर्तित किया जाता है । (पैरा 42, 43 46 और 48)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2015] (2015) 5 एस. सी. सी. 223 :
रत्नावती और एक अन्य बनाम **कविता घनश्यामदास** ; 36,37

[2004] (2004) 11 एस. सी. सी. 219 :
गुरिंदर पाल बनाम **जगमित्तर सिंह** । 39,40,43

सिविल अपीली अधिकारिता : 2018 की सिविल अपील सं. 3777.

2012 की आर.एफ.ए. सं. 353 में दिल्ली उच्च न्यायालय के तारीख 18 फरवरी, 2013 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री भीम सैन जैन और सुश्री प्रेरणा मेहता

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री जयंत भूषण, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सुश्री वी. एस. लक्ष्मी, ए. वेन्यागम बालन, प्रमोद दयाल, निकुंज दयाल और सुश्री पायल दयाल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे ने दिया ।

न्या. सप्रे – इजाजत दी जाती है ।

2. यह अपील 2012 की आर. एफ. ए. सं. 353 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 18 फरवरी, 2014 के उस अंतिम निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने इस मामले में के अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दी थी और 2008 के वाद सं. 135 में अपर जिला न्यायाधीश, तीस हज़ारी न्यायालय, दिल्ली द्वारा पारित तारीख 8 मई, 2012 के उस निर्णय और आदेश को कायम रखा था जिसके द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संहिता" कहा गया है) के आदेश 7, नियम 11 के अधीन शक्तियों का सहारा लेते हुए अपीलार्थियों के वाद को खारिज कर दिया गया था ।

3. इस अपील में अंतर्वलित विधि संबंधी संक्षिप्त प्रश्न का मूल्यांकन करने की दृष्टि से कुछ सुसंगत तथ्यों का, जो बहुत संक्षिप्त हैं, इसमें इसके नीचे उल्लेख करना आवश्यक है ।

4. अपीलार्थी, उस सिविल वाद में, जिससे यह अपील उद्भूत हुई है, वादी हैं जबकि प्रत्यर्थी प्रतिवादी हैं ।

5. तारीख 11 अक्तूबर, 1996 को, सुच्चा सिंह (मूल वादी), जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है और अब उसका प्रतिनिधित्व उसके विधिक प्रतिनिधियों (अपीलार्थी सं. 1 से 4) द्वारा किया जा रहा है, प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, दिल्ली के न्यायालय में 1996 का सिविल वाद सं. 705 फाइल किया था । वह वाद केवल स्थायी व्यादेश की मंजूरी के लिए फाइल किया गया था ।

6. वादपत्र, अन्य बातों के साथ-साथ इन अभिकथनों पर आधारित था कि प्रत्यर्थी सं. 1 मकान, अर्थात्, सनवर नगर डाकघर रायपुर खुर्द, नई दिल्ली में स्थित गली सं. 9 के भू-खंड सं. 1 में के परिसर की बेसमेंट और आधे प्रथम तल का, जैसा कि वादपत्र (उपाबंध पी-2) में विस्तार से वर्णन किया गया है (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वादगत परिसर" कहा गया है) स्वामी था । प्रत्यर्थी सं. 1 ने तारीख 27 फरवरी, 1996 को वादगत परिसर का सुच्चा सिंह (वादी) को 11,50,000/- रुपए में विक्रय करने का करार किया और सुच्चा सिंह ने प्रत्यर्थी सं. 1 को कुल रकम में से अग्रिम के रूप में चैक द्वारा 2,00,000/- रुपए की राशि का संदाय कर दिया ।

7. इसके अतिरिक्त, यह प्रकथन किया गया था कि सुच्चा सिंह को फरवरी, 1996 में उक्त परिसर का कब्ज़ा दे दिया गया था । यह अभिकथित किया गया था कि मई, 1996 में प्रत्यर्थी सं. 1 ने सुच्चा सिंह से और धनराशि की मांग की जिसके अनुसरण में सुच्चा सिंह ने प्रत्यर्थी सं. 1 को 36,000/- रुपए का नकद संदाय कर दिया ।

8. यह अभिकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने तारीख 10 अक्तूबर, 1996 को सुच्चा सिंह को वादगत परिसर से बेदखल करने की धमकी दी और अपने गुर्गों की सहायता से उसे बेदखल करने का असफल प्रयास किया (वादपत्र का पैरा 13) ।

9. इस वाद-हेतुक के आधार पर सुच्चा सिंह ने वादगत परिसर के संबंध में प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध तारीख 11 अक्तूबर, 1996 को वादगत परिसर पर उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने से उसे अवरुद्ध करने के लिए

स्थायी व्यादेश हेतु एक सिविल वाद फाइल किया ।

10. प्रत्यर्थी सं. 1 ने लिखित कथन फाइल किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिकथन किया गया कि उसने वादगत परिसर का कब्ज़ा, प्रस्तुत प्रत्यर्थी सं. 2 को पहले ही अंतरित कर दिया है और इसलिए वादी-सुच्चा सिंह के पास उपलब्ध उपचार, यदि कोई है, यह होगा कि वह प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए सिविल वाद फाइल करे न कि स्थायी व्यादेश के लिए वाद चलाए ।

11. सुच्चा सिंह (वादी) ने तारीख 27 नवम्बर, 1998 को न्यायालय में यह कथन किया कि वह सिविल वाद वापस लेना चाहता है । उसने यह कथन भी किया कि वह प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध समुचित अनुतोष का दावा करने के लिए सक्षम न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियां फाइल करने की दृष्टि से सिविल वाद वापस ले रहा है ।

12. विचारण न्यायालय ने तारीख 27 नवम्बर, 1998 को मूल वादी (सुच्चा सिंह) को सिविल वाद वापस लेने के लिए अनुज्ञात किया और निम्नलिखित आदेश पारित किया :–

> "वादी के काउन्सेल द्वारा यह निवेदन किया गया है कि वह समुचित न्यायालय के समक्ष मामला फाइल करने के लिए इस न्यायालय से वाद वापस लेना चाहता है । प्रतिवादी की ओर से उपस्थित काउन्सेल ने वादी द्वारा वाद वापस लिए जाने के संबंध में कोई आक्षेप नहीं किया है तथापि, उन्होंने उपगत खर्चे की मांग की है । दोनों पक्षकारों के कथनों को पृथक्-पृथक् लेखबद्ध किया गया है । पक्षकार न्यायालय में अपने कथनों के संबंध में अपने वचनबंधों के रूप में आबद्ध होंगे ।
>
> मैने फाइल के अभिलेख और दोनों पक्षकारों के कथनों का परिशीलन किया है । वादी को 500/- रुपए के खर्चे के अधीन रहते हुए, जो कि प्रतिवादी को संदत्त किया जाएगा, वाद को वापस लेने के लिए अनुज्ञात किया जाता है । कार्यवाही पूरी होने के पश्चात्, फाइल अभिलेख-कक्ष में परेषित की जाए ।
>
> (अर्चना सिन्हा)
> सिविल न्यायाधीश, दिल्ली
> 27.11.1998"

13. तारीख 25 फरवरी, 1999 को सुच्चा सिंह ने प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध तारीख 27 फरवरी, 1996 के करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए अपर जिला न्यायाधीश, तीस हज़ारी न्यायालय, दिल्ली के न्यायालय में 1999 का सिविल वाद सं. 54 (जिसे 2008 के वाद सं. 135 के रूप में पुनर्संख्यांकित किया गया था) फाइल किया । वादी ने पैरा 13 में करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल करने हेतु वाद-हेतुक का प्रोद्भवन गठित करने वाले तथ्यों का कथन किया ।

14. प्रत्यर्थी सं. 2, अर्थात्, अभिकथित पश्चात्वर्ती क्रेता ने वाद में पक्षकार (प्रतिवादी) बनने के लिए संहिता के आदेश 1, नियम 10 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । वह आवेदन मंजूर कर लिया गया था और प्रत्यर्थी सं. 2 को प्रतिवादी सं. 2 के रूप में शामिल किया गया था ।

15. दोनों प्रत्यर्थियों (प्रतिवादी सं. 1 और 2) ने अपने-अपने लिखित कथन फाइल किए और तथ्य तथा विधि संबंधी विभिन्न आधारों पर वादी के दावे से इनकार किया । प्रत्यर्थी सं. 2 ने भी वादपत्र खारिज किए जाने के लिए संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन एक आवेदन फाइल किया ।

16. अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिकथन किया गया कि प्रश्नगत वाद (करार का विनिर्दिष्ट पालन) संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंधों द्वारा प्रभावित होता है क्योंकि विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा, जिसका दावा प्रस्तुत वाद में किया गया है, वादी-सुच्चा सिंह द्वारा पूर्व में संस्थित उस वाद में, जो कि उसने स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया था, किया जा सकता था और किया जाना चाहिए था । यह दलील दी गई थी कि पूर्व में संस्थित वाद में करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा न करने से, जो कि यद्यपि वादी के पास पूर्ववर्ती वाद में जिस वाद-हेतुक का अभिवाक् किया गया है उसके आधार पर दावा किए जाने के लिए उपलब्ध था, संहिता के आदेश 2, नियम 2 में अंतर्विष्ट वर्जन बाद में संस्थित किए गए ऐसे सिविल वाद को लागू होगा जिसमें करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा किया जाता है और इसलिए ऐसे वाद का अब गुणागुण के आधार पर विचारण नहीं किया जा सकता है ।

17. इस वाद के लंबित रहने के दौरान, सुच्चा सिंह की तारीख 4 अगस्त, 2000 को मृत्यु हो गई और मुकदमेबाजी को चालू रखने के लिए उसके विधिक प्रतिनिधियों (जो कि इस मामले में अपीलार्थी हैं) को वादियों

के रूप में अभिलेख पर लाया गया । अपीलार्थियों (वादियों) ने प्रत्यर्थी सं. 2 (इसमें प्रत्यर्थी सं. 2) द्वारा फाइल किए गए आवेदन का विरोध किया और यह दलील दी कि करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद संधार्य है और संहिता के आदेश 2, नियम 2 द्वारा वर्जित नहीं है ।

18. तथापि, विचारण न्यायालय ने तारीख 8 मई, 2012 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 के आवेदन को मंजूर कर लिया और परिणामस्वरूप यह अभिनिर्धारित करते हुए अपीलार्थियों के वाद को खारिज कर दिया कि वह संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंधों द्वारा वर्जित है । दूसरे शब्दों में, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वादियों को करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा पूर्ववर्ती वाद में करना चाहिए था, जो कि सुच्चा सिंह (मूल वादी) द्वारा स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया गया था क्योंकि विचारण न्यायालय के अनुसार ऐसा अनुतोष तब दावा किए जाने के लिए उपलब्ध था जब प्रथम वाद फाइल किया गया था ।

19. वादियों ने व्यथित महसूस करते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा, विचारण न्यायालय के तर्काधार और निष्कर्ष से सहमत होते हुए अपील खारिज कर दी । वादियों ने उक्त निर्णय से व्यथित होकर इस न्यायालय में विशेष इजाजत लेकर प्रस्तुत अपील फाइल की है ।

20. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउन्सेल श्री भीम सैन जैन, प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री जयन्त भूषण और प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से विद्वान् काउन्सेल श्री प्रमोद दयाल को सुना गया

21. पक्षकारों के विद्वान् काउन्सेल की सुनवाई करने और मामले के अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् हम अपील को मंजूर करने के लिए प्रेरित हुए हैं और जबकि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश को अपास्त करते हुए प्रत्यर्थी सं. 2 (प्रतिवादी सं. 2) द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को खारिज करते हैं और इस मामले में के अपीलार्थियों द्वारा प्रत्यर्थियों के विरुद्ध फाइल किए गए 1999 के सिविल वाद सं. 54 (जिसे 2008 के वाद सं. 135 के रूप में पुनर्संख्यांकित किया गया है) को, जिससे यह अपील उद्भूत हुई है, विधि के अनुसार गुणागुण के आधार पर विचारण किए जाने के लिए प्रत्यावर्तित करते हैं ।

22. हमारी सुविचारित राय में, विचारण न्यायालय और उच्च

न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को मंजूर करके गलती की है और तद्नुसार संहिता के आदेश 7, नियम 11 के उपबंधों का अवलंब लेते हुए वाद को संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंधों द्वारा वर्जित मानकर उसे खारिज करके गलती की है । हमारी राय में, इस मामले के तथ्यों को संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंध लागू नहीं होते हैं और इसलिए सिविल वाद को संहिता के आदेश 2, नियम 2 के अधीन वर्जित मानकर खारिज नहीं किया जाना चाहिए था ।

23. संहिता का आदेश 2, नियम 2 निम्नलिखित रूप में है :–

"2. **वाद के अंतर्गत संपूर्ण दावा होगा** - (1) हर वाद के अंतर्गत वह पूरा दावा होगा जिसे उस वाद-हेतुक के विषय में करने का वादी हकदार है, किन्तु वादी वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने की दृष्टि से अपने दावे के किसी भाग का त्याग कर सकेगा ।

(2) **दावे के भाग का त्याग** – जहां वादी अपने दावे के किसी भाग के बारे में वाद लाने का लोप करता है या उसे साशय त्याग देता है वहां उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए या त्यक्त भाग के बारे में वाद नहीं लाएगा ।"

24. संहिता के आदेश 2, नियम 2(1) में यह उपबंध किया गया है कि प्रत्येक वाद के अंतर्गत वह पूरा दावा होगा जिसे उस वाद-हेतुक के विषय में करने का वादी हकदार है । तथापि, वादी को, वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने की दृष्टि से अपने दावे के किसी भाग का त्याग करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है ।

25. संहिता के आदेश 2, नियम (1) के पठन से यह स्पष्ट होता है कि जब भी वादी वादपत्र में किए गए वाद-हेतुक के अभिवाक् के आधार पर कोई वाद फाइल करता है तब वह प्रतिवादी के विरुद्ध उन सभी अनुतोषों को, जो कि उसके वादपत्र में उसके द्वारा किए गए वाद-हेतुक के अभिवाक् के आधार पर उसे प्रोद्भूत हुए हैं, सम्मिलित करने और उनका दावा करने संबंधी विधिक बाध्यता के अधीन होता है । दूसरे शब्दों में, यदि वादी द्वारा वादपत्र में जिस वाद-हेतुक का अभिवाक् किया गया है उसके आधार पर वह प्रतिवादी (प्रतिवादियों) के विरुद्ध दो अनुतोषों, अर्थात् "क" और "ख" का दावा करने का हकदार है तो वह वाद में "क" और "ख"

दोनों अनुतोषों का एक साथ दावा करने के बाध्यताधीन है । संहिता का आदेश 2, नियम 2(1) वादी को, वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने की दृष्टि से अपने अनुतोष के किसी भाग का त्याग करने के लिए समर्थ करता है ।

26. तथापि, संहिता के आदेश 2, नियम 2(2) में यह उपबंध किया गया है कि जब वादी अपने वाद में अपने दावे/अनुतोष के किसी भाग के बारे में वाद लाने का लोप करता है या उसे साशय त्याग देता है तब, ऐसी दशा में, उसे उसके पश्चात् अपने वाद में इस प्रकार लोप किए गए या/और त्यक्त दावे/अनुतोष की बाबत वाद लाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा । दूसरे शब्दों में, नियम 2(2) वादी को लोप किए गए या/और त्यक्त अनुतोष का दावा करने के लिए द्वितीय वाद फाइल करने की अनुज्ञा नहीं देता है ।

27. हमारी राय में, प्रतिवादी द्वारा वादी के विरुद्ध आदेश 2, नियम 2(2) का अवलंब लेने की अनिवार्यता यह है कि वह अनुतोष, जिसका दावा वादी ने द्वितीय वाद में किया है, वादी के पास प्रतिवादी के विरुद्ध पूर्ववर्ती वाद में किए गए वाद-हेतुक के अभिवाक् के आधार पर पूर्ववर्ती वाद में दावा किए जाने के लिए भी उपलब्ध था किन्तु वादी द्वारा उसका दावा नहीं किया गया था ।

28. अतः, हमें इस प्रश्न की परीक्षा करनी होगी कि वादी वादगत संपत्ति के संबंध में प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के विरुद्ध पूर्ववर्ती वाद में उसके द्वारा किए गए वाद-हेतुक के अभिवाक् के आधार पर करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा करने का हकदार था अथवा नहीं ।

29. दूसरे शब्दों में, जो प्रश्न विचारार्थ उद्भूत होता है, वह यह है कि सुच्चा सिंह (मूल वादी) पूर्व में संस्थित वाद में स्थायी व्यादेश के अपने दावे के अतिरिक्त प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा कर सकता था अथवा नहीं ?

30. ऊपर उल्लिखित प्रश्न के संबंध में हमारा उत्तर वादियों (अपीलार्थियों) के पक्ष में और प्रतिवादियों (प्रत्यर्थियों) के विरुद्ध है । दूसरे शब्दों में, ऊपर उल्लिखित प्रश्न के संबंध में हमारा उत्तर यह है कि वादी पूर्ववर्ती वाद में स्थायी व्यादेश के अनुतोष के साथ-साथ, प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा निम्नलिखित कारणों से नहीं कर सकता था ।

31. प्रथमतः, स्थायी व्यादेश के अनुतोष का दावा करने संबंधी वाद-हेतुक और करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा करने संबंधी वाद-हेतुक अलग-अलग हैं और एक वाद-हेतुक के अंतर्गत दूसरा वाद-हेतुक नहीं आ सकता है ।

32. दूसरे शब्दों में, कोई वादी ऐसे वाद-हेतुक के आधार पर, जिसमें उसने स्थायी व्यादेश के अनुतोष का दावा किया है, प्रतिवादी के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष का दावा नहीं कर सकता है ।

33. द्वितीयतः, वादगत परिसर पर वादी के कब्ज़े में हस्तक्षेप करने पर प्रतिवादियों के विरुद्ध अस्थायी/स्थायी व्यादेश का दावा करने संबंधी वाद-हेतुक तब प्रोद्भूत हुआ जब प्रतिवादी सं. 1 ने वादी को वादगत परिसर से बेदखल करने की धमकी दी या अन्यथा वादगत परिसर के संबंध में वादी को क्षति कारित की । यह संहिता के आदेश 39, नियम 1(ग) द्वारा शासित होता है, जो कि व्यादेश अनुदत्त किए जाने के संबंध में है । ऐसा वाद फाइल करने की परिसीमा अवधि प्रतिवादी द्वारा वादी को बाधा कारित करने की तारीख से तीन वर्ष है (देखिए – परिसीमा अधिनियम के भाग 7 के अनुच्छेद 85, 86 और 87) ।

34. दूसरी ओर, करार के विनिर्दिष्ट पालन का दावा करने के लिए वाद फाइल करने संबंधी वाद-हेतुक उस तारीख से उद्भूत होता है जो कि करार के पालन के लिए नियत की गई है या जब ऐसी कोई तारीख नियत नहीं की जाती है तब वह तारीख जब वादी को इस बात की अवेक्षा होती है कि प्रतिवादी द्वारा पालन से इनकार किया गया है । ऐसा वाद फाइल करने की परिसीमा अवधि ऐसी तारीख से तीन वर्ष है (देखिए – परिसीमा अधिनियम के भाग 2 का अनुच्छेद 54) ।

35. तृतीयतः, जब दोनों अनुतोष/दावे, अर्थात् (1) स्थायी व्यादेश और (2) करार का विनिर्दिष्ट पालन, समान नहीं हैं, जब वाद चलाने के लिए वाद-हेतुक भिन्न-भिन्न हैं, जब दोनों अनुतोषों/दावों के लिए अलग-अलग वाद-हेतुक गठित करने के लिए आवश्यक तथ्य संबंधी घटक भिन्न-भिन्न हैं और अंततः जब दोनों अनुतोष/दावे परिसीमा अधिनियम के पृथक्-पृथक् अनुच्छेदों द्वारा शासित होते हैं, तब हमारी राय में दोनों अनुतोषों का एक-साथ एक ही वाद-हेतुक में दावा करना संभव नहीं है ।

36. इस न्यायालय ने **रत्नावती और एक अन्य** बनाम **कविता घनश्यामदास**[1] वाले मामले में किंचित समरूप तथ्यों के आधार पर इसी प्रश्न की विस्तार से परीक्षा की । इस न्यायालय ने इस न्यायालय के पूर्ववर्ती विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए, जिनमें इस प्रश्न के संबंध में कार्यवाही की गई है, पैरा 22 से पैरा 31 में यह अभिनिर्धारित किया कि इन तथ्यों के आधार पर संहिता के आदेश 2, नियम 2 में अंतर्विष्ट वर्जन वादी के विरुद्ध इस प्रकार लागू नहीं होता है कि उसे वादगत संपत्ति के संबंध में प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन का दावा करने के लिए पश्चात्वर्ती वाद फाइल करने से निर्हकित कर दिया जाए ।

37. हम **रत्नावती** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि को लागू करते हैं और यह अभिनिर्धारित करते हैं कि मूल वादी द्वारा प्रत्यर्थियों (प्रतिवादियों) के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किया गया वाद संहिता के आदेश 2, नियम 2 द्वारा वर्जित नहीं है और उसे गुणागुण के आधार पर विचारण के लिए चलाने योग्य अभिनिर्धारित किया जाता है ।

38. इसके बाद हम इस संबंध में एक अन्य प्रश्न की परीक्षा करते हैं कि क्या वादी को स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किए गए पूर्ववर्ती वाद को वापस लेते समय विचारण न्यायालय की किसी अनुज्ञा/स्वतंत्रता के अभाव में वादी वादगत संपत्ति के संबंध में प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल करने का हकदार था ?

39. हमारी सुविचारित राय में, जो कुछ ऊपर अभिनिर्धारित किया गया है, उसे देखते हुए यह प्रश्न अब विचारार्थ शेष नहीं रहता है । तथापि, **गुरिंदर पाल** बनाम **जगमित्तर सिंह**[2] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, इस प्रश्न का उत्तर प्रत्यर्थियों के विरुद्ध दिया जाता है ।

40. **गुरिन्दर पाल** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के समक्ष किंचित समरूप तथ्यों के आधार पर यह प्रश्न उद्भूत हुआ, अर्थात्, यदि संहिता के आदेश 23, नियम 1(3) के अधीन वाद वापस लेने की अनुज्ञा प्रदान करने वाले आदेश में वादी को नए सिरे से वाद फाइल करने की स्वतंत्रता प्रदाने करने संबंधी तथ्य का विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया

---

[1] (2015) 5 एस. सी. सी. 223.

[2] (2004) 11 एस. सी. सी. 219.

जाता है तो क्या नए सिरे से वाद फाइल करना संहिता के आदेश 2, नियम 2 के विरुद्ध होगा ?

41. इस न्यायालय (तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ) ने न्यायमूर्ति आर. सी. लाहोटी (जैसे कि विद्वान् न्यायमूर्ति तब थे) की ओर से निर्णय सुनाते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि द्वितीय वाद फाइल करना संहिता के आदेश 2, नियम 2 के प्रतिकूल नहीं है और वह गुणागुण के आधार पर विचारण किए जाने के लिए पोषणीय है । इस न्यायालय ने पैरा 6 में यही अभिनिर्धारित किया :–

> "6. पक्षकारों के विद्वान् काउन्सेल को सुनने के पश्चात् हमारा यह समाधान हो गया है कि उच्च न्यायालय तथा प्रथम अपील न्यायालय का निर्णय उस सीमा तक कायम नहीं रखा जा सकता है जिस सीमा तक सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 के अधीन अधिनियमित वर्जन लागू किया गया है । सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 2, नियम 2 वादी-अपीलार्थी के उपचार को वर्जित करता है और इसलिए उसका अर्थान्वयन कठोरतापूर्वक किया जाना चाहिए । पूर्ववर्ती वाद में पारित विचारण न्यायालय के तारीख 15 जून, 1994 के आदेश को, जिसे इसमें इसके ऊपर उद्धृत किया गया है, न्यायालय द्वारा उसी तारीख को अभिलिखित वादी-अपीलार्थी के कथन के प्रकाश में पढ़ा जाना चाहिए । वादी-अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से यह कहा था कि वह नए सिरे से वाद फाइल करने की स्वतंत्रता सहित वाद को वापस लेने की इजाजत की ईप्सा कर रहा था । विचारण न्यायालय ने यह लेखबद्ध किया कि वाद को 'वादी के कथन को ध्यान में रखते हुए' वापस लिए जाने के कारण खारिज किया जा रहा है । न्यायालय के आदेश और वादी के कथन का संयुक्त रूप से पठन करने पर यह संकेत मिलता है कि वाद को वापस लिए जाने के कारण खारिज कर दिया गया था क्योंकि वादी नए सिरे से वाद फाइल करना चाहता था, जिसमें स्पष्ट रूप से वादी विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री की न कि मात्र व्यादेश की ईप्सा करेगा, जैसी कि उस वाद में, जिसे वापस लेने की ईप्सा की गई थी, प्रार्थना की गई थी । पश्चात्वर्ती वाद में, प्रथम अपील न्यायालय का यह राय बनाना ठीक नहीं था कि वादी को तारीख 15 जून, 1994 के आदेश में नए सिरे से वाद फाइल करने की स्वतंत्रता प्रदान नहीं की गई थी । उच्च न्यायालय द्वारा प्रथम अपील न्यायालय के उस निष्कर्ष को कायम

नहीं रखा जाना चाहिए था ।"

42. वर्तमान मामले को ऊपर उल्लिखित विधि का सिद्धांत लागू करने पर हम यह पाते हैं कि मूल वादी (सुच्चा सिंह) ने पूर्ववर्ती वाद में स्पष्ट रूप से यह कथन किया था कि वह वाद को इसलिए वापस लेना चाहता है क्योंकि वह वाद की विषयवस्तु के संबंध में सक्षम न्यायालय के समक्ष समुचित कार्यवाहियां फाइल करना चाहता है । विचारण न्यायालय ने उसका कथन तारीख 27 नवम्बर, 1998 को अभिलिखित किया और वाद को वापस लेने की अनुज्ञा प्रदान की ।

43. हमारी सुविचारित राय में, मूल वादी (सुच्चा सिंह) के कथन को न्यायालय द्वारा वाद को वापस लेने के लिए प्रदान की गई अनुज्ञा के साथ पढ़ने से संहिता के आदेश 23, नियम 1(3) की अपेक्षा पूरी हो जाती है । इससे वादी निश्चित रूप से नए सिरे से वाद, अर्थात्, प्रतिवादियों के विरुद्ध करार के विनिर्दिष्ट पालन का दावा करने के लिए सिविल वाद, फाइल करने के लिए समर्थ हो जाता है । हमारी राय में, न्यायालय मूल वादी (सुच्चा सिंह) द्वारा वाद को वापस लेने और उसे नए सिरे से फाइल करने के संबंध में किए गए कथन को विचार में लेने का हकदार था और उसके कथन को सिविल वाद वापस लेने और नए सिरे से वाद फाइल करने की अनुज्ञा प्रदान करने वाले आदेश का भाग बनाया जा सकता था, जैसा कि **गुरिन्दर पाल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था ।

44. अतः, हमारी राय में, प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउन्सेल द्वारा दी गई इस दलील में कोई सार नहीं है ।

45. इसके बाद, प्रत्यर्थी सं. 2 (प्रतिवादी सं. 2) की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने वाद के गुणागुण के संबंध में न्यायालय का ध्यान दिलाया । हमें खेद है कि हम वाद में अंतर्वलित संविवाद के गुणागुण से संबंधित किसी प्रश्न की परीक्षा नहीं कर सकते हैं । अब विचारण न्यायालय को वाद का गुणागुण के आधार पर विचारण करने और वाद को विधि के अनुसार विनिश्चित करने की कार्यवाही करनी है ।

46. पूर्वगामी विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए, हम विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्काधार और निकाले गए निष्कर्ष से सहमत नहीं हो सकते हैं, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 (प्रतिवादी

सं. 2) द्वारा संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को मंजूर करके और परिणामस्वरूप अपीलार्थियों (वादियों) के वाद को संहिता के आदेश 2, नियम 2 के उपबंधों द्वारा वर्जित मानकर खारिज करके गलती की गई है ।

47. परिणामस्वरूप, अपील सफल होती है और तद्नुसार मंजूर की जाती है । आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है । प्रत्यर्थी सं. 2 (प्रतिवादी सं. 2) द्वारा संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किया गया आवेदन खारिज किया जाता है ।

48. अपीलार्थियों द्वारा प्रत्यर्थियों के विरुद्ध फाइल किया गया सिविल वाद (1999 का वाद सं. 54, जिसे 2008 के वाद सं. 135 के रूप में पुनर्संख्यांकित किया गया है) चलाने योग्य अभिनिर्धारित किया जाता है । इसे तद्नुसार गुणागुण के आधार पर विधि के अनुसार विचारण किए जाने के लिए उसकी मूल फाइल पर प्रत्यावर्तित किया जाता है ।

49. विचारण न्यायालय को यह निदेश दिया जाता है कि वह सिविल वाद का विनिश्चय शीघ्रतापूर्वक और अधिमानतः एक वर्ष के भीतर, हमारी किसी भी मताभिव्यक्ति से प्रभावित हुए बिना गुणागुण के आधार पर करे ।

अपील मंजूर की गई ।

ग्रो.